International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 5; September 2017; Page No. 24-25

भारत में भाषा समस्या और राजभाषा की द्विभाषायी नीति

अभिषेक मिश्र
शोध छात्र, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, सतना, मध्य प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

भारत सांस्कृति रूप से विविधता सम्पन्न देश है या यूं कहें कि भारत की विविधता समस्त मानवीय गुणों की लहराती हुई फसल है। भारत की विविधता के दो पहलू हैं। प्रथम पहलू 'विविधता में एकता और अखण्ड भारत की संकल्पना को साकार रूप प्रदान करता है तो दूसरा पहलू कई बार अखण्डता पर प्रश्न चिह्न लगा देता है। विविधता के दूसरा पहलू के अन्तर्गत ही भाषा समस्या को रखा जा सकता है।

''वस्तुतः 26 जनवरी 1950 की स्थिति पर गौर करें तो 14 प्रमुख भाषाओं को राजभाषा का दर्जा दिया गया जबकि 1961 की जनगणना के दौरान विभिन्न मातृ भाषाओं की स्थिति लगभग 1949 थी।''[1]

उल्लेखनीय है कि जहां स्वतंत्रता के पूर्व हिन्दी भाषा ने राष्ट्रीय आंदोलन को एकीकृत करने का प्रयास किया वहीं स्वतंत्रता के पश्चात् भाषा एक प्रमुख विवाद बन कर उठ खड़ा हुआ। स्वतंत्रता पश्चात् सर्वप्रमुख समस्याओं में से भाषा समस्या भी एक थी। प्रश्न यह था कि राजभाषा के रूप में किसे स्वीकारा जाए अंग्रेजी या हिन्दी। स्वतंत्रता युगीन भारत में अधिकांश बुद्धिजीवी वर्ग अंग्रेजी भाषा का ही प्रयोग कर रहे थे। हिन्दी के आलोचक मुख्यतः हिन्दी के अल्पविकसित होने, विशेषकर साहित्यिक, विज्ञान और राजनीति की भाषा के रूप में पिछड़े होने का तर्क दे रहे थे। परन्तु वास्तविकता यह भी कि यदि हिन्दी राजभाषा बन गई तो अहिन्दी भाषी प्रदेशों, खासकर दक्षिण भारतीय लोगों की शैक्षणिक और आर्थिक स्तर पर भारी नुकसान होगा क्योंकि उस समय सरकारी नौकरियों में मुख्यतः भाषा आधारित प्रतियोगिताओं के माध्यम से ही नियुक्ति की जाती थी। अतः वे इस तर्क की आरे बढ़ रहे थे कि अहिन्दी भाषी प्रदेशों पर हिन्दी लादने के परिणामतः उनके आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों पर हिन्दी प्रदेशों का वर्चस्व स्थापित हो जाएगा।

संविधान सभा के माध्यम से और बाद में किए गए कुछ प्रयासों से पूर्व हमें महात्मा गांधी की भाषा नीति को भी समझ लेना चाहिए यह इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि अगर ठीक तरीके से इस नीति का कार्यान्वयन किया गया होता तो संभवतः भाषा के विवाद का प्रश्न उतना जटिल नहीं होता जितना कि आज है।

गांधी जो जिस भाषा के नेतृत्व की बात करते थे वह 'हिन्दुस्तानी' भाषा थी जो हिन्दी और उर्दू का मिश्रण थी। उनके समर्थन का आधार यह था कि यह देवनागरी और फारसी लिपियों मिश्रित थी जिसके परिणामस्वरूप कम से कम उत्तर भारत में भाषायी एकता काबिज रह सकती थी। स्वतंत्रता के पश्चात् संविधान सभा ने इस बात पर विचार विमर्श किया कि राजभाषा किसे बनाया जाए हिन्दी को या हिंदुस्तानी को या फिर अंग्रेजी को। ''हिन्दुस्तानी के समर्थक 'जवाहरलाल नेहरू', 'मौलाना आजाद' और 'सरदार पटेल' थे। किन्तु जब हिन्दी और हिन्दुस्तानी के प्रश्न पर मतदान हुआ तो हिन्दी के पक्ष में 63 मत और हिन्दुस्तानी के पक्ष में कुल 32 मत पड़े। जबकि देवनागरीलिपि के पक्ष में 63 और विपक्ष में 18 मत पड़े थे।''[2] अतः फरवरी 1948 में जब संविधान का प्रारूप परिचालित किया गया तो उसमें सिफ 'हिन्दी' शब्द था, हिन्दुस्तानी और ऊर्दू जैसे शब्दों को हटा दिया गया।

संविधान की रचना पूर्ण होने और लागू होने पर भाग–17 के अंतर्गत राजभाषा का उल्लेख देखने को मिलता है। इसमें 4 अध्याय हैं और अनु. 343 से 351 के मध्य संवैधानिक उपबंध दिए गए हैं जो निम्नवत हैं–

''.....''भाग–17
राजभाषा
अध्याय–1 संघ की भाषा
अनु. 343– संघ की राजभाषा
अनु. 344– राजभाषा के संबंध में आयोग और संसद की समिति
अध्याय–2 प्रादेशिक भाषाएं
अनु. 345– राज्य की राजभाषा या राजभाषाएँ
अनु. 346– एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच या किसी राज्य और संघ के बीच पत्र आदि की राजभाषा
अनु. 347– किसी राज्य की जनसंख्या के किसी अनुभाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध
अध्याय–3 उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों आदि की भाषा
अनु.–348 उच्चतम न्यायालयों और उच्च न्यायालयों में और अधिनियमों, विधेयकों आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा
अनु.–349. भाषा से संबंधित कुछ विधियाँ अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया
अध्याय–4 विशेष निदेश
अनु.–350 व्यथा के निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग की जाने वाली भाषा
अनु. 350 (क) प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएं
अनु. 350 (ख) भाषाई अल्पसंख्यक वर्गो के लिए विशेष अधिकारी
अनु. 351 हिंदी भाषा के विकास के लिए निदेश''[3]

अतः इस प्रकार से संविधान में प्रावधान किया गया कि देवनागरी लिपि में लिखी हिन्दी अन्तर्राष्ट्रीय अंकों के साथ भारत की राजभाषा होगी। ''अंग्रेजी का सभी सरकारी कामकाजों के लिए प्रयोग 1965 तक ही होगा।''[4] साथ ही हिन्दी को धीरे–धीरे कई चरणों में लागू कर दिया जाएगा। 1965 से मात्र हिन्दी को एकमात्र सरकारी राजभाषा बना दिया जाएगा। ''लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि 1965 के बाद भी खास कार्यों के लिए अंग्रेजी के प्रयोग को जारी रखने या इसके प्रयोग की अवधि को बढ़ा देने की शक्ति दे दी गई।''[5] इस प्रकार से संविधान ने पूर्ण रूप से सरकार को यह जिम्मेदारी दी कि वह हिन्दी के प्रचार–प्रसार व विकास के लिए

कार्य करे। प्रदेशों के विधानमण्डल प्रदेश स्तर पर अपनी राजभाषा का निर्णय करें, हलांकि संघ की राजभाषा केन्द्र एवं राज्यों तथा राज्यों एवं राज्यों के बीच आदान–प्रदान की भाषा होगी।

परन्तु राजभाषा के रूप में हिन्दी की सफलता की संभावना को स्वयं हिन्दी के पक्षकारों ने ही बर्बाद कर दिया। अहिन्दी प्रदेशों में हिन्दी को मान्यता दिलाने के लिए एक धीमी और संतुलित रवैया अपनाने के बजाय वहाँ के कट्टरवादी लोगों ने अति उत्साह तथा अहंकार पूर्ण निर्दयी और उग्र रवैया अपनाया। लोगों को प्रेम से समझाने के स्थान पर उन्होंने सरकारी कदमों के माध्यम से हिन्दी को थोपना चाहा। अतः इस वजह से हिन्दी विरोधी आन्दोलन का जन्म हुआ। इस संदर्भ में नेहरू द्वारा सन् 1959 से संसद में कहा गया कथन उल्लेखनीय है– ''अति उत्साह ने ही हिन्दी की स्वीकृति एवं प्रसार के मार्ग में अवरोध उत्पन्न कर दिया है।''[6]

हिन्दी की सबसे बड़ी कमजोरी यह थी कि इसका प्रयोग मुख्यतः हिन्दी साहित्य तक ही सीमित रह गया जबकि तकनीक और वैज्ञानिक स्तर के साथ–साथ उच्च शिक्षा में मानवविकी विषयों में थोड़ा बहुत छोड़कर कोई प्रचार प्रसार और प्रयोग के कोई भी सजग प्रयास नहीं किए गए।

हिन्दी को प्रकृति विज्ञान, समाज, उच्च शिक्षा एवं पत्रकारिता की भाषा के रूप में विकसित करने के प्रयासों के बजाय हिन्दी भाषी नेताओं का सबसे ज्यादा जोर इस बात पर था कि इसे एक मात्र सरकारी भाषा बना दिया जाए।

इसी बीच 1956 ई. से 1960 ई. के बीच मतभेद और भी गहरे हो गए। 1955 ई. में संविधान के प्रावधानों के अनुरूप बनी राजभाषा आयोग की रिपोर्ट 1956 में प्रस्तुत की गई। इस रिपोर्ट में कहा गया कि ''धीरे–धीरे सभी सरकारी विभागों में अंग्रेजी की जगह हिन्दी भाषा को अभी से लागू करने की कोशिश की जानी चाहिए ताकि 1965ई. में हिन्दी पूर्णतः अंग्रेजी का स्थान ले ले।'' [7]

आयोग में प. बंगाल एवं तमिलनाडु के दो सदस्य 'प्रो. सुनीति कुमार चटर्जी' और 'पी.सुब्बाराव' ने अपनी असहमति दर्ज की और आयोग के सदस्य पर हिन्दी का पक्षपात करने का आरोप लगाया साथ साथ ही अंग्रेजी जारी रखने की भी माँग की। यह बिडम्बना ही है कि 'प्रो. सुनीति चटर्जी आजादी के पूर्व बंगाल में हिन्दी प्राचारिणी सभा के प्रभारी थे। संविधान के प्रावधानों के अनुरूप संसद की एक विशेष संयुक्त समिति ने इस आयोग की रिपोर्ट पर पुनर्विचार किया। आयोग के मुख्य सलाहों को स्वीकार करते हुए इसने केन्द्रीय सरकारों को हिन्दी के विकास और कार्यालयों में हिन्दी के अधिक से अधिक प्रयोग के लिए वृहद कार्ययोजना बनाने और लागू करने का निर्देश दिया था।

इस संयुक्त समिति की संस्तुतियों को लागू करने के लिए राष्ट्रपति ने 1960 ई. में एक आदेश जारी किया, जिसके अनुसार '1965 ई. के बाद हिन्दी मुख्य राजभाषा होगी, परन्तु अंग्रेजी सहायक राजभाषा के रूप में बिना किसी प्रतिबंध के बनी रहेगी।''[8] हिन्दी संघ लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित परीक्षाओं के लिए वैकल्पिक भाषा कुछ समय पश्चात् बनेगी परन्तु तत्काल इन परीक्षाओं के लिए हिन्दी के पेपर में कम से कम निर्धारित अंक लाना अनिवार्य बना दिया जाएगा। राष्ट्रपति के निर्देशों के अनुरूप केंद्र सरकार ने हिन्दी को प्रोत्साहित करने हेतु कई कदम उठाए। इसमें केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की स्थापना, विभिन्न क्षेत्रों में हिन्दी अनुवाद या हिन्दी की स्तरीय कृतियों का प्रकाशन, केंद्रीय कर्मचारियों के लिए अनिवार्य हिन्दी प्रशिक्षण, कानून की सभी पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद एवं अदालतों में उनके उपयोग का प्रोत्साहन शामिल था।

राजभाषा आयोग की रिपोर्ट संयुक्त संसदीय समिति की संस्तुतियों, राष्ट्रपति के आदेश तथा उसे लागू करने के प्रयासों ने अहिन्दी भाषी इलाकों में संदेह और चिन्ता उत्पन्न किया। मार्च, 1958ई. में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचारिणी सभा के पूर्व अध्यक्ष 'सी. राजगोपालाचारी' ने घोषित किया, ''हिन्दी, अहिन्दी लोगों के लिए ठीक उतनी ही विदेशी है, जितनी कि हिन्दी समर्थकों के लिए अंग्रेजी।'' दूसरी तरफ हिन्दी के दो प्रमुख हिमायती–'पुरुषोत्तम दास टंडन' और 'सेठ गोविन्द दास' ने संयुक्त संसदीय समिति पर अंग्रेजी परस्त होने का आरोप लगाया। 'प्रधानमंत्री नेहरू' और तत्कालीन शिक्षामंत्री 'मौलाना अबुल कलाम आजाद' की जमकर आलोचना की। 1957 ई. में डॉ. लोहिया की संयुक्त सोशलिष्ट पार्टी और जनसघ ने एक उग्र आन्दोलन शुरू किया जो करीब 2 वर्षो तक हिन्दी को तत्काल लागू करने के लिए चलता रहा। सी. पी. आई. के महासचिव 'अजय घोष' ने हिन्दी को राष्ट्रीय सहमति के साथ लागू करने का समर्थन किया।

नेहरू की मृत्यु के बाद 1965 ई. में दक्षिण मे एक हिन्दी विरोधी आन्दोलन में जोर पकड़ना शुरू किया। दक्षिणवासियों को यह डर था कि कहीं 26 जनवरी, 1965 ई. से हिन्दी एकमात्र राजभाषा न बन जाए। 'द्रविड़ मुनेत्र कड़गम' और 'सी. राजगोपालाचारी' ने माँग की कि अंग्रेजी को भारत की राजभाषा घोषित किया जाए। 17 जनवरी को 'डी.एम.के.' ने मद्रास राज्य हिन्दी विरोधी सम्मेलन आयोजित किया और '26 जनवरी' को शोक दिवस के रूप में मनाने का आह्वान किया। छात्रों ने इसमें बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया तथा उन्होंने यह नारा प्रचारित किया, ''हिन्दी नेवर, इंग्लिश एवर'' (हिन्दी कभी नहीं, अंग्रजी हमेशा)। कई तमिल युवकों ने जिनमें चार छात्र भी शामिल थे, आत्मदाह कर लिया। दो तमिल मंत्री 'सी. सुब्रह्मण्यम' और 'अल्गेसन' ने केन्द्रीय मंत्रिमण्डल से इस्तीफा दे दिया। इस समय एम मात्र महत्वपूर्ण केन्द्रीय मंत्री, सूचना एवं प्रसारण मंत्री इन्दिरा गांधी ने आन्दोलनकारियों से सहानुभूति जताई और मद्रास पहुँचीं। इसी कारण नेहरू के बाद वह पहली उत्तर भारतीय नेता बन गई, जिन्होंने तमिलों तथा अन्य दक्षिण भारतीय लोगों का विश्वास अर्जित किया।

जनवरी, 1966 ई. में लाल बहादुर शास्त्री के निधन के बाद इन्दिरा गांधी प्रधानमंत्री बनीं। वे पहले ही दक्षिण भारतीय लोगों का विश्वास जीत चुकी थीं। उन्होंने राजभाषा अधिनियम, 1963 ई. को संशोधित करने के लिए 27 नंवम्बर, 1967 ई. को विधेयक प्रस्तुत किया जो 16 दिसम्बर, 1967 ई. को लोकसभा में पारित कर दिया गया। इसके द्वारा अंग्रेजी को अनिश्चितकाल के लिए प्रयोग करने की अनुमति दे दी गई। इस प्रकार हमेशा के लिए द्विभाषायी नीति को स्वीकार कर लिया गया।

संदर्भ ग्रंथ

1. एस.के. पाण्डे, आधुनिक भारत, प्रयाग एकेडमी पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रब्यूटर्स, इलाहाबाद पृ. सं. 440
2. ब्रज किशोर शर्मा, भारत का संविधान एक परिचय नौवा संस्करण 2012–पृ. सं. 356
3. भारत का संविधान, मूल, सेण्ट्रल लॉ पब्लिकेशन पृ. सं. या– ;गपगद्धए (188–192)
4. एस. के. पाण्डे, आधुनिक भारत, प्रयाग एकेडमी पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, इलाहाबाद पृ. सं. 441
5. वही पृ. सं. 441
6. वही पृ. सं. 442
7. वही पृ. सं. 442